न यक्षैर्न च दैत्येन्द्रैर्नोरगैर्न च किन्नरैः। न मनुष्यैर्न पशुभिर्दोषैर्नैवात्मसम्भवैः ॥८७॥
ज्वराक्षिरोगातीसारप्लीहगुल्मादिकैस्तथा । द्वेषेर्ष्यामत्सराद्यैर्वा रागलोभादिभिः क्षयम् ॥८८॥
न चान्यैर्नीयते कैश्चिन्नित्या यात्यन्तनिर्मला। तामाप्नोत्यमले न्यस्य केशवे हृदयं नरः ॥८९॥

असारसंसारविवर्तनेषु मा यात तोषं प्रसभं ब्रवीमि ।
सर्वत्र दैत्यास्समतामुपेत समत्वमाराधनमच्युतस्य ॥९०॥
तस्मिन्प्रसन्ने किमिहास्त्यलभ्यं धर्मार्थकामैरलमल्पकास्ते ।
समाश्रिताद्ब्रह्मतरोरनन्तानिः संशयं प्राप्स्यथ वै महत्फलम् ॥९१॥

इति श्रीविष्णुमहापुराणे प्रथमेंऽशे सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

अठारहवाँ अध्याय

श्रीपराशर उवाच

तस्यैतां दानवाश्चेष्टां दृष्ट्वा दैत्यपतेर्भयात्। आचचख्युः स चोवाच सूदानाहूय सत्वरः ॥१॥

हिरण्यकशिपुरुवाच

हे सूदा मम पुत्रोऽसावन्येषामपि दुर्मतिः। कुमार्गदेशिको दुष्टो हन्यतामविलम्बितम् ॥२॥
हालाहलं विषं तस्य सर्वभक्षेषु दीयताम्। अविज्ञातमसौ पापो हन्यतां मा विचार्यताम् ॥३॥

परम शान्ति, अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा, वायु, मेघ, वरुण, सिद्ध, राक्षस, यक्ष, दैत्यराज, सर्प, किन्नर, मनुष्य, पशु तथा अपने में ही उत्पन्न होने वाले दोषों, ज्वर, नेत्ररोग, अतिसार, प्लीहा तथा गुल्म आदि रोगों, अथवा द्वेष, मत्सर, ईर्ष्या, राग तथा लोभ आदि से कभी क्षीण नहीं होती है । जो नित्य तथा अत्यन्त निर्मल है, उस परमा शान्ति को मनुष्य अपने हृदय को भगवान् केशव में लगाकर प्राप्त कर लेता है । दैत्यों ! तुमलोग असार संसार के विषयों में कभी सन्तुष्ट न हो यह मैं आपलोगों से आग्रह पूर्वक कहता हूँ । हे दैत्यों ! आपलोग सर्वत्र समदृष्टि करें। समदृष्टि ही भगवान् अच्युत की आराधना है ॥९०॥ उन भगवान् अच्युत के प्रसन्न हो जाने पर संसार में कुछ भी दुर्लभ नहीं रह जाता है । आपलोग धर्म, अर्थ तथा काम की कभी इच्छा न करें । वे अत्यन्त अल्प पुरुषार्थ हैं । ब्रह्मरूपी महावृक्ष का आश्रय लेने पर आपलोग निःसन्देह रूप से मोक्ष जैसे महाफल को प्राप्त कर लेंगे ॥९२॥

इस तरह श्रीविष्णुमहापुराण के प्रथम अंश के सत्रहवें अध्याय का शिवप्रसाद द्विवेदी (श्रीधराचार्य) कृत हिन्दी अनुवाद सम्पूर्ण हुआ ॥१७॥

प्रह्लाद को मारने के लिए विष, शस्त्र तथा अग्नि आदि का प्रयोग तथा प्रह्लाद कृत भगवत् स्तुति

श्रीपराशर महर्षि ने कहा— प्रह्लाद की इस प्रकार की चेष्टा को देखकर तथा दैत्यराज से डरकर दैत्यों ने उनको सारा वृत्तान्त कह सुनाया और शीघ्र ही दैत्यराज ने रसोइये को बुलाकर कहा ॥१॥ **हिरण्यकशिपु ने कहा—** ऐ सूदों (रसोइयों) यह मेरा पुत्र दुर्मति है यह दूसरों को भी कुमार्ग पर चलने का उपेदश देता है । अतएव इसको तुमलोग शीघ्र मार डालो ॥२॥ तुमलोग इसके समस्त खाद्य पदार्थों में हालाहल विष मिलाकर दो किन्तु उसे इसका पता नहीं चलना चाहिए । इस पापी को बिना विचार किए ही तुमलोग मार डालो ॥३॥ **श्रीपराशर महर्षि ने**

श्रीपराशर उवाच

ते तथैव ततश्चक्रुः प्रह्लादाय महात्मने। विषदानं यथाज्ञप्तं पित्रा तस्य महात्मनः ॥४॥
हालाहलं विषं घोरमनन्तोच्चारणेन सः। अभिमन्त्र्य सहान्नेन मैत्रेय बुभुजे तदा ॥५॥
अविकारं स तद्भुक्त्वा प्रह्लादःस्वस्थमानसः। अनन्तख्यातिनिर्वीर्यं जरयामास तद्विषम् ॥६॥
ततः सूदा भयत्रस्ता जीर्णं दृष्ट्वा महद्विषम्। दैत्येश्वरमुपागम्य प्रणिपत्येदमब्रुवन् ॥७॥

सूदा ऊचुः

दैत्यराज विषं दत्तमस्माभिरतिभीषणम्। जीर्णं तेन सहान्नेन प्रह्लादेन सुतेन ते ॥८॥

हिरण्यकशिपुरुवाच

त्वर्यतां त्वर्यतां हे हे सद्यो दैत्यपुरोहिताः। कृत्यां तस्य विनाशाय उत्पादयत मा चिरम् ॥९॥

श्रीपराशर उवाच

सकाशमागम्य ततः प्रह्लादस्य पुरोहिताः। सामपूर्वमथोचुस्ते प्रह्लादं विनयान्वितम् ॥१०॥

पुरोहिता ऊचुः

जातस्त्रैलोक्यविख्यात आयुष्मन्ब्रह्मणः कुले। दैत्यराजस्य तनयो हिरण्यकशिपोर्भवान् ॥११॥
किं देवैः किमनन्तेन किमन्येन तवाश्रय। पिता ते सर्वलोकानां त्वं तथैव भविष्यसि ॥१२॥
तस्मात्परित्यजैनां त्वं विपक्षस्तवसंहिताम्। श्लाघ्यः पिता समस्तानां गुरुणां परमो गुरुः ॥१३॥

प्रह्लाद उवाच

एवमेतन्महाभागाः श्लाघ्यमेतन्महाकुलम्। मरीचेः सकलेऽप्यस्मिन् त्रैलोक्ये नान्यथा वदेत् ॥१४॥
पिता च मम सर्वस्मिञ्जगत्युत्कृष्टचेष्टितः। एतदप्यवगच्छामि सत्यमत्रापि नानृतम् ॥१५॥
गुरूणामपि सर्वेषां पिता परमको गुरुः। यदुक्तं भ्रान्तिस्तत्रापि स्वल्पापि हि न विद्यते॥१६॥

कहा— प्रह्लाद के पिता ने जैसा कहा था उसी तरह वे रसोइये महात्मा प्रह्लाद को विष प्रदान किए ॥४॥ हे मैत्रेय! उस समय भगवन्नामोच्चारण के द्वारा प्रह्लाद उस विष मिश्रित अन्न को खा गये ॥५॥ भगवन्नाम के प्रभाव से उस विष मिश्रित अन्न को भी खाकर प्रह्लाद निर्विकार बने रहे और उसे पचाकर स्वस्थ बने रहे ॥६॥ उसके पश्चात् भयभीत होकर रसोइये, उस विष को पचा हुआ देखकर दैत्यराज के पास जाकर और उनको प्रणाम करके कहे ॥७॥ **रसोइयों ने कहा—** दैत्यराज ! हमलोगों ने अत्यन्त भयङ्कर विष दिया, किन्तु आपके पुत्र प्रह्लाद अन्न के साथ उसे पचा गये ॥८॥ **हिरण्यकशिपु ने कहा—** हे दैत्यपुरोहितों ! आपलोग उस (प्रह्लाद) के विनाश के लिए शीघ्र ही कृत्या को उत्पन्न कीजिये ॥९॥ **श्रीपराशर महर्षि ने कहा—** उसके पश्चात् वे दैत्य पुरोहित विनीत प्रह्लाद के सन्निकट आकर उनसे शान्ति पूर्वक कहे ॥१०॥ **पुरोहितों ने कहा—** हे आयुष्मन् ! तुम त्रैलोक्य में विख्यात ब्रह्माजी के वंश में उत्पन्न हुए हो । तुम दैत्यराज हिरण्यकशिपु के पुत्र हो ॥११॥ तुमको देवताओं अथवा अनन्त अथवा किसी दूसरे से क्या मतलब है ? तुम्हारे पिता सम्पूर्ण लोकों के स्वामी हैं तुम भी वैसे ही होगे ॥१२॥ अतएव तुम विपक्ष की स्तुति करना त्याग दो । तुम्हारे पिता श्लाघ्य हैं । वे समस्त गुरुओं के गुरु हैं ॥१३॥ **प्रह्लाद ने कहा—** हे महाभागगण ! आपलोगों ने यह जो कहा है कि यह महान् वंश प्रशंसनीय है यह सत्य है । सम्पूर्ण त्रैलोक्य में मरीचि महर्षि का कुल महान् है, इसके विषय में कोई कुछ नहीं कह सकता है ॥१४॥ मैं यह भी जानता हूँ कि मेरे पिता सम्पूर्ण संसार में सर्वोत्कृष्ट पराक्रमी हैं । यह भी सत्य है, इसमें कोई झूठ नहीं है ॥१५॥ आपने यह

पिता गुरुर्न सन्देहः पूजनीयः प्रयत्नतः। तत्रापि नापराध्यामीत्येवं मनसि मे स्थितम् ॥१७॥
यत्त्वेतत्किमनन्तेनेत्युक्तं युष्माभिरीदृशम्। को ब्रवीति यथान्याय्यं किं तु नैतद्वचोऽर्थवत् ॥१८॥
इत्युक्त्वा सोऽभवन्मौनी तेषां गौरवयन्त्रितः। प्रहस्य च पुनः प्राह किमनन्तेन साध्विति ॥१९॥
साधु भो किमनन्तेन साधु भो गुरवो मम। श्रूयतां यदनन्तेन यदि खेदं न यास्यथ ॥२०॥
धर्मार्थकाममोक्षाश्च पुरुषार्था उदाहृताः। चतुष्टयमिदं यस्मात्तस्मात्किं किमिदं वचः ॥२१॥
मरीचिमिश्रैर्दक्षाद्यैस्तथैवान्यैरनन्ततः। धर्मः प्राप्तस्तथा चान्यैरर्थः कामस्तथाऽपरैः ॥२२॥
तत्तत्त्ववेदिनो भूत्वा ज्ञानध्यानसमाधिभिः। अवापुर्मुक्तिमपरे पुरुषा ध्वस्तबन्धनाः ॥२३॥
सम्पदैश्वर्यमाहात्म्यज्ञानसन्ततिकर्मणाम्। विमुक्तेश्चैकतो लभ्यं मूलमाराधनं हरेः ॥२४॥
यतो धर्मार्थकामाख्यं मुक्तिश्चापि फलं द्विजाः। तेनापि किं किमित्येवमनन्तेन किमुच्यते ॥२५॥
किं चापि बहुनोक्तेन भवन्तो गुरवो मम। वदन्तु साधु वासाधु विवेकोऽस्माकमल्पकः ॥२६॥
बहुनात्र किमुक्तेन स एव जगतः पतिः। स कर्त्ता च विकर्त्ता च संहर्ता च हृदि स्थितः ॥२७॥
स भोक्ता भोज्यमप्येवं स एव जगदीश्वरः। भवद्भिरेतत्क्षन्तव्यं बाल्यादुक्तं तु यन्मया ॥२८॥

पुरोहिता ऊचुः

दह्यमानस्त्वमस्माभिरग्निना बाल रक्षितः। भूयो न वक्ष्यसीत्येवं नैव ज्ञातोऽस्यबुद्धिमान् ॥२९॥
यदास्मद्वचनान्मोहग्राहं न त्यक्ष्यते भवान्। ततः कृत्यां विनाशाय तव स्रक्ष्यामदुर्मते ॥३०॥

जो कहा है कि पिता सभी गुरुओं से बढ़कर गुरु होता है इस विषय में भी मुझकों थोड़ा सा भी भ्रम नहीं है ॥१६॥ मेरे पिताजी गुरु हैं और वे हर प्रकार से पूजनीय हैं, इसलिए मेरे मन में भी है कि मैं पिताजी का थोड़ा सा भी अपराध न करूँ ॥१७॥ किन्तु आपने यह जो कहा है कि तुम्हें अनन्त से कौन सा प्रयोजन है ? इस बात को भला कौन न्यायोचित कहेगा ? यह सार्थक वाणी नहीं हैं ॥१८॥ इतना कहकर प्रह्लाद गुरुओं के गौरव को ध्यान में रखकर चुप हो गये । उसके बाद वे हँसकर कहने लगे आपने यह जो कहा है कि अनन्त से क्या प्रयोजन है ? आपका यह कथन बड़ा अच्छा है ॥१९॥ हे गुरुगण ! आपके इस कथन को धन्यवाद है कि तुम्हें अनन्त से क्या प्रयोजन है ? यदि आपलोगों को बुरा न लगे तो अनन्त से जो प्रयोजन है, उसे मैं बतलाऊँ ॥२०॥ जिन अनन्त से धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष ये चारो पुरुषार्थ सम्भव हैं उनसे क्या प्रयोजन है ? आपकी इस वाणी को मैं क्या कहूँ॥२१॥ उन अनन्त की ही आराधना करके मरीचि, दक्ष तथा अन्य मुनीश्वरों में से किसी ने धर्म को प्राप्त किया, किसी ने अर्थ को प्राप्त किया, तथा किसी ने काम की प्राप्ति की ॥२२॥ उस परमात्म तत्त्व के ज्ञाता होकर ज्ञान, ध्यान तथा समाधि के द्वारा संसार के बन्धन को काटकर पुरुषों ने मोक्ष प्राप्त किया ॥२३॥ सम्पत्ति, ऐश्वर्य, माहात्म्य, ज्ञान, सन्तति, कर्म तथा मोक्ष इन सबों की ऐकान्तिक प्राप्ति का मूल साधन श्रीहरि की आराधना ही है॥२४॥ हे द्विजों ! जिससे धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष रूपी फल की प्राप्ति होती है, ऐसे अनन्त से क्या प्रयोजन है ? ऐसा आपलोग क्यों कहते हैं ?॥२५॥ बहुत अधिक कहने से क्या लाभ है, आपलोग हमारे गुरु हैं । आपलोग उचित अनुचित कुछ भी कह सकते है; मुझमें तो विचार करने की शक्ति बहुत कम है ॥२६॥ इस विषय में बहुत कहनें से क्या लाभ है, वे अनन्त ही जगत् के स्वामी हैं । वे सबों के हृदय में स्थित हैं । वे ही संसार के कर्ता पालक और संहार करने वाले हैं ॥२७॥ वे ही भोक्ता, भोज्य तथा जगदीश्वर हैं । लडकपन के कारण मैंने जो कुछ कहा है, उसे आपलोग क्षमा कर दें ॥२८॥ **पुरोहितों ने कहा—** हमलोगों ने तुमको अग्नि में जलने से इसलिए

प्रह्लाद उवाच

कः केन हन्यते जन्तुर्जन्तुः कः केन रक्ष्यते। हन्ति रक्षति चैवात्मा ह्यसत्साधु समाचरन् ॥३१॥
कर्मणा जायते सर्वं कर्मैव गतिसाधनम्। तस्मात्सर्वप्रयत्नेन साधुकर्म समाचरेत्॥३२॥

श्रीपराशर उवाच

इत्युक्तास्तेन ते क्रुद्धा दैत्यराजपुरोहिताः। कृत्यामुत्पादयामासुर्ज्वालामालोज्ज्वलाकृतिम् ॥३३॥
अतिभीमा समागम्य पादन्यासक्षतक्षितिः। शूलेन साधु सङ्क्रुद्धा तं जघानाशु वक्षसि ॥३४॥
तत्तस्य हृदयं प्राप्य शूलं बालस्य दीप्तिमत्। जगाम खण्डितं भूमौ तत्रापि शतधा गतम् ॥३५॥
यत्रानपायी भगवान् हृद्यास्ते हरिरीश्वरः। भङ्गो भवति वज्रस्य तत्र शूलस्य का कथा॥३६॥
अपापे तत्र पापैश्च पातिता दैत्ययाजकैः। तानेव सा जघानाशु कृत्या नाशं जगाम च ॥३७॥
कृत्यया दह्यमानांस्तान्विलोक्य स महामतिः। त्राहि कृष्णेत्यनन्तेति वदन्नभ्यवपद्यत॥३८॥

प्रह्लाद उवाच

सर्वव्यापिन् जगद्रूप जगत्स्त्रष्टर्जनार्दन। पाहि विप्रानिमानस्माद्दुःसहान्मन्त्रपावकात्॥३९॥
यथा सर्वेषु भूतेषु सर्वव्यापी जगद्गुरुः। विष्णुरेव तथा सर्वे जीवन्त्वेते पुरोहिताः॥४०॥
यथा सर्वगतं विष्णुंमन्यमानोऽनपायिनम्। चिन्तयाम्यरिपक्षेऽपि जीवन्त्वेते पुरोहिताः॥४१॥
ये हन्तुमागता दत्तं यैर्विषं यैर्हुताशनः। यैर्दिग्गजैरहं क्षुण्णो दष्टः सर्पैश्च यैरपि॥४२॥

बचा लिया था कि तुम बालक हो, फिर ऐसी बातें नहीं कहोगे, हम नहीं जानते थे कि इतना मूर्ख हो ॥२९॥ यदि तुम हमारे कहने से अपने मोहमय आग्रह को नहीं त्यागोगे तो हमलोग तुमको मारने के लिए कृत्या उत्पन्न करेंगे॥३०॥ **प्रह्लाद ने कहा—** कौन प्राणी किसके द्वारा मारा जाता है और कौन किससे रक्षा करता है। आत्मा (जीवात्मा) शुभ (विहित) कर्मों के आचारण से अपनी रक्षा तथा अशुभ (निषिद्ध) कर्मों के आचरण से अपना नाश स्वयं करता है ॥३१॥ सबकुछ कर्मों के ही द्वारा उत्पन्न होता है और कर्म ही शुभ एवं अशुभ गतियों का साधन है। इसलिए अपने सम्पूर्ण प्रयासों द्वारा शुभ कर्म को करना चाहिए ॥३२॥ **श्रीपराशर महर्षि ने कहा—** इस तरह से प्रह्लाद के कहने पर वे दैत्यराज के पुरोहित क्रुद्ध हो गये और उन सबों ने कृत्या को उत्पन्न कर दिया। उसका शरीर अग्नि के ज्वाला समूह से व्याप्त था ॥३३॥ उस कृत्या का रूप अत्यन्त भयङ्कर था। उसके पैरों के आघात से पृथिवी काँप जाती थी। क्रुद्ध उस कृत्या ने शीघ्र ही आकर प्रह्लाद के हृदय में त्रिशूल से प्रहार किया ॥३४॥ चमकता हुआ वह त्रिशूल बालक प्रह्लाद के हृदय से स्पर्श होते ही सैकड़ों टुकड़ों में खण्ड-खण्ड होकर पृथिवी पर गिर पड़ा॥३५॥ जिसके हृदय में श्रीहरि का निरन्तर निवास है, उसमें संस्पर्श होते ही वज्र भी टूट जाय त्रिशूल की कौन सी बात है ॥३६॥ पापी दैत्य पुरोहितों ने निष्पाप प्रह्लाद पर कृत्या का प्रयोग किया था अतएव वह कृत्या उन दैत्य पुरोहितों को ही मार दी और स्वयं भी नष्ट हो गयी ॥३७॥ कृत्या के द्वारा अपने गुरुजनों को जलाये जाते हुए देखकर प्रह्लादजी हे कृष्ण ! हे अनन्त ! रक्षा कीजिये, यह कहकर उन गुरुओं की ओर दौड़े ॥३८॥ **प्रह्लाद ने कहा—** हे सर्वव्यापक ! हे विश्वरूप ! हे जगत् के स्रष्टा ! हे जनार्दन ! इस दुःसह मन्त्राग्नि से इन ब्राह्मणों की रक्षा करें ॥३९॥ यदि भगवान् विष्णु सभी भूतों में, सर्वव्यापक तथा जगद्गुरु हैं, तो ये सभी पुरोहित जीवित हो जायँ॥४०॥ यदि मैं शत्रुओं में भी भगवान् विष्णु को सर्वव्यापक तथा अनपायी रूप से चिन्तन करता हूँ तो ये पुरोहित जीवित हो जायँ ॥४१॥ जो लोग मुझे मारने आये, जिनलोगों ने मुझे विष दिया, जिन लोगों ने मुझे आग में

तेष्वहं मित्रभावेन समः पापोऽस्मि न क्वचित्। यथा तेनाद्य सत्येन जीवन्त्वसुरयाजकाः॥४३॥

श्रीपराशर उवाच

इत्युक्तास्तेन ते सर्वे संस्पृष्टाश्च निरामयाः। समुत्तस्थुर्द्विजा भूयस्तमूचुः प्रश्रयान्वितम्॥४४॥

पुरोहिता ऊचुः

दीर्घायुरप्रतिहतो बलवीर्यसमन्वितः। पुत्रपौत्रधनैश्वर्यैर्युक्तो वत्स भवोत्तमः॥४५॥

श्रीपराशर उवाच

इत्युक्त्वा तं ततो गत्वा यथावृत्तं पुरोहिताः। दैत्यराजाय सकलमाचचख्युर्महामुने॥४६॥

इति श्रीविष्णुमहापुराणे प्रथमेंऽशे अष्टादशोऽध्यायः॥१८॥

उन्नीसवाँ अध्याय

श्रीपराशर उवाच

हिरण्यकशिपु श्रुत्वा तां कृत्यां वितथीकृताम्। आहूय पुत्रं पप्रच्छ प्रभावस्यास्य कारणम्॥१॥

हिरण्यकशिपुरुवाच

प्रह्लाद सुप्रभावोऽसि किमेतत्ते विचेष्टितम्। एतन्मन्त्रादिजनितमुताहो सहजं तव॥२॥

श्रीपराशर उवाच

एवं पृष्टस्तदा पित्रा प्रह्लदोऽसुरबालकः। प्रणिपत्य पितुः पादाविदं वचनमब्रवीत्॥३॥

डाल दिया, जिन दिग्गजों ने मेरे ऊपर प्रहार किया तथा जिन सर्पों ने मुझे काटा, उन सबों को मैं मित्रभाव से देखता हूँ उनके प्रति मेरी पाप बुद्धि नहीं है। यदि यह सत्य है तो ये असुर पुरोहित जीवित हो जायँ॥४२-४३॥ **श्रीपराशर महर्षि ने कहा—** इस तरह से कहकर प्रह्लादजी ने ज्यों ही उन पुरोहितों का स्पर्श किया, त्योंहि वे स्वस्थ्य होकर उठ गये और विनयावनत प्रह्लाद से कहे॥४४॥ **पुरोहितों ने कहा—** हे वत्स! तुम श्रेष्ठ हो तुम दीर्घ आयु, तथा अप्रतिहत बल एवं पराक्रम से युक्त तथा पुत्र, पौत्र; धन तथा ऐश्वर्य से सम्पन्न होओ॥४५॥ **श्रीपराशर महर्षि ने कहा—** इस तरह से कहकर वे दैत्यपुरोहित हिरण्यकशिपु के पास आये और सारा वृत्तान्त उन्हें सुनाये॥४६॥

इस तरह श्रीविष्णुमहापुराण के प्रथम अंश के अठारहवें अध्याय का शिवप्रसाद द्विवेदी (श्रीधराचार्य) कृत हिन्दी अनुवाद सम्पूर्ण हुआ॥१८॥

प्रह्लादजी के द्वारा भगवान् के गुणों का वर्णन, भगवान् द्वारा प्रह्लाद की रक्षा करने के लिए चक्रराज को प्रेषित करना

श्रीपराशर महर्षि ने कहा— हिरण्यकशिपु ने जब सुना कि कृत्या व्यर्थ हो गयी तो उसने प्रह्लाद को बुलाकर उसके उस प्रभाव का कारण पूछा॥१॥ **हिरण्यकशिपु ने कहा—** प्रह्लाद तु अत्यन्त प्रभावशाली हो, तुम्हारी ये सारी चेष्टाएँ मन्त्र जनित हैं अथवा स्वाभाविक है ?॥२॥ **श्रीपराशर महर्षि ने कहा—** पिता के द्वारा इस प्रकार से पूछे जाने पर असुर बालक प्रह्लाद ने अपने पिता के चरणों में नमस्कार करके कहा॥३॥ हे तात! यह